International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
e-ISSN :2581-9925, Impact Factor (Cosmos: 7.555 & I2OR: 5.105), Volume 08, No. 01(II), January - March, 2026, pp. 45-51

महिलाएं कार्य एवं सामाजिक भूमिका अपेक्षाएं : नवीन भारतीय परिदृश्य

सविता भदौरिया*

सहायक आचार्य समाजशास्त्र, स्व. राजेश पायलट राजकीय महाविद्यालय, बांदीकुई।

*Corresponding Author: savita.deepa@gmail.com

Citation: भदौरिया, सविता (2026). महिलाएं कार्य एवं सामाजिक भूमिका अपेक्षाएं : नवीन भारतीय परिदृश्य. International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science, 08(01(II)), 45–51.

सार

पश्चिम से लेकर पूर्व तक जगत की समस्त महिलाओं ने ऐतिहासिक काल से ही रूढ़िवादी परंपराओं को ढोते–ढोते न जाने कितने जीवन व्यतीत कर दिये, किंतु आज भी संरक्षण एवं सुरक्षा नहीं है। युग परिवर्तन के इस दौर में देश की स्वतंत्रता के इतने दशकों बाद भी आधुनिक समाज में महिलाओं की भूमिका घरेलू स्तर पर प्रदत्त एवं कार्यस्थल में अर्जित प्रस्थिति के रूप में व्याप्त है। जिसके परिणाम स्वरुप घर से बाहर कार्यस्थल पर लैंगिग समानता की नई कार्य संस्कृति का जन्म हुआ। भारतीय टाइम यूज सर्वे रिपोर्ट 2024 के अनुसार महिला एवं पुरुष की कार्य सहभागिता दर में व्याप्त अंतर श्रम विभाजन में व्याप्त लैंगिग असमानता को प्रकट करता है। विश्व बैंक के जेंडर डाटा पोर्टल के अनुसार 187 देश की सूची में भारत 165वे स्थान पर है। गृहिणी एवं कार्मिक की दोहरी भूमिका अपेक्षाओं ने महिलाओं को भूमिका संघर्ष की मनो–सामाजिक समस्या में उलझा दिया है। भारतीय समाज में महिलाओं की पारिवारिक अपेक्षाएं, मातृत्व अपेक्षाएं, वैवाहिक अपेक्षाएं, सांस्कृतिक–धार्मिक अपेक्षाएं तथा व्यक्तिगत अपेक्षाएं होती हैं। भूमिका संघर्ष की तीव्रता भूमिका अपेक्षा की असंगति तथा व्यक्तित्व पर निर्भर करती है प्रस्तुत शोधपत्र के अंतर्गत भारतीय समाज के विविध धर्म एवम् सामाजिक वर्ग में महिलाओ की कार्य आधारित प्रस्थिति, दृष्टिकोण एवम् व्यवहार तथा कामकाजी महिलाओ की संगठित भूमिका के मध्य बनने वाले संबंधों एवम भूमिका अपेक्षाओं का अध्ययन कर महिलाओ की कार्य प्रकृति में भूमिका संघर्ष तथा भूमिका अपेक्षा के मध्य संबंध को जानना है।

शब्दकोश: *भूमिका संघर्ष, भूमिका अपेक्षा, लैंगिक असमानता, सतत् विकास लक्ष्य।*

प्रस्तावना

मनुष्य के लिए सभी धार्मिक आध्यात्मिक आख्यानों में कर्म को प्रारंभ से ही सर्वोपरि माना गया है। इसी आधार पर सभ्यता के आरंभिक दौर में मानव जाति ने अपने संघर्षशील जीवन के प्रारंभिक दिनों को सरल एवं गरिमामय बनाने तथा सामर्थ्य एवं क्षमता का सदुपयोग करने के लिए दैनिक आवश्यकता अनुसार कार्यों का विभाजन किया। आदिकाल से आज तक इस जगत में प्रत्येक जीवित प्राणी को कर्म का पाठ पढ़ाया जाता है। कार्य तो सभी करते हैं, परंतु महिला एवं पुरुष के सन्दर्भ में कार्य के चुनाव की समानता एवं स्वतंत्रता सर्वत्र आज भी असमान है। पश्चिम से लेकर पूर्व तक जगत की समस्त महिलाओं ने ऐतिहासिक काल से ही रूढ़िवादी परंपराओं को ढोते–ढोते न जाने कितने जीवन निकाल दिए, किंतु आज भी संरक्षण एवं सुरक्षा नहीं है। युग

* *Copyright © 2026 by Author's and Licensed by Inspira. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution License which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work properly cited.*

परिवर्तन के इस दौर में देश की स्वतंत्रता के इतने दशकों बाद भी महिलाओं के साथ होने वाले अपराध जैसे– दहेज, अपहरण,हिंसा, दुष्कर्म ने महिलाओं की सुरक्षा एवम स्वतंत्रता पर प्रश्न चिन्ह लगाया है। प्रत्येक समाज की संरचनात्मक एवं प्रकार्यात्मक आधारभूत इकाई महिला व पुरुष होते है। दोनों मिलकर समाज के आधारभूत विभिन्न गतिविधियों में सक्रिय रहते हैं। सभ्यता के आरंभिक दौर में सामाजिक संतुलन को बनाए रखते हुए मानव जाति ने अपनी कार्यो को दो भागों में विभाजित कर दिया। घर के आंतरिक कार्य महिलाओं द्वारा एवं बाह्य कार्य जैसे शिकार एवं वस्तु संग्रह पुरुषों द्वारा किए जाने लगा। कालांतर में यह व्यवस्था पुरुष अधिपत्य में पितृसत्ता में बदल गई एवम आयु एवं लिंग के आधार पर कार्य का विभाजन हो गया। कार्य विभाजन का यह परंपरागत स्वरुप आधुनिक समाज में भी महिलाओं की भूमिका घरेलू स्तर पर प्रदत्त एवं कार्य क्षेत्र में अर्जित प्रस्थिति के रूप में व्याप्त है। जिसके परिणाम स्वरुप घर से बाहर कार्यस्थल पर लैंगिग समानता की नई कार्य संस्कृति का जन्म हुआ। भारतीय समाज में सभी नियम, अधिकार एवं कानूनी प्रावधान लैंगिक समानता को ध्यान में रखकर बनाए गए। परंतु घरेलू स्तर पर लैंगिग समानता का स्वरूप अपेक्षाकृत अभी समान नहीं है। घर में परंपरागत संस्कृति एवं आधुनिकता का सम्मिश्रण है।

प्रत्येक कर्ता समाज में प्रस्थिति एवं भूमिका का समुच्चय है (पेज नंबर 56 सिंघी व गोस्वामी 1998)। कर्ता के लिए प्रस्थिति एक समाज अपेक्षित पद है तथा भूमिका व्यक्ति विशेष के व्यवहार एवं स्थितियों से संबंधित है। प्रस्थिति एवं भूमिका व्यक्ति के व्यवहार से जुड़ा ऐसा संबोध है जो समय,स्थान एवं संस्कृति सापेक्ष है। जब एक व्यक्ति प्रस्थिति की अपेक्षाओं के अनुरूप भूमिका नहीं निभाते तब सामाजिक संतुलन बिगड़ने लगता है। भूमिका अपेक्षा एवं भूमिका ग्रहण के मध्य उचित संतुलन ही सामाजिक संगठन का मूल आधार है। जब एक प्रस्थिति की अपेक्षाओं के अनुरूप भूमिका का पालन न किया जाए अथवा ऐसा अवसर आ जाए जब दो भिन्न परिस्थितियों से जुड़ी भूमिका एक साथ निभाई हो उसके मानसिक अंतर्द्वंद का अनुभव ही भूमिका संघर्ष की स्थिति को जन्म देता है। (पेज न 75 सिंघी व गोस्वामी 1998) भारतीय समाज की विवाहित कामकाजी महिलाएं इसी मानसिक अंतर्द्वंद का शिकार है क्योंकि समाज परंपरा तथा आधुनिकता के मिश्रित दौर में है। वर्तमान समाज में नवीन मूल्य, मान्यताएं एवं नवीन व्यवहार प्रतिमानों के कारण भूमिका संघर्ष एक महत्वपूर्ण समस्या बन गई है। विवाहित कामकाजी महिला विभिन्न अंतर्विरोधी भूमिका संबंधित मांगों को पूरी नहीं कर पाने की स्थिति में भूमिका संघर्ष एवं तनाव का शिकार हो रही है। प्रत्येक महिला अपने जीवन काल में एकाधिक बार इस भूमिका संघर्ष का शिकार होती ही है। प्रत्येक भूमिका से कुछ सामाजिक अपेक्षाएं जुड़ी होती है यदि महिला में उच्च निर्णय कौशल नहीं है तब महिलाओं का व्यक्तित्व दो विरोधी अपेक्षाओं के मध्य उलझ जाता है । वर्तमान आधुनिकीकरण के युग में परंपराओं के संरक्षण एवं हस्तांतरण का दायित्व भी महिलाओं पर है। आवश्यकता एवं परिस्थिति के अनुसार प्रस्थिति व भूमिकाओं के प्रतिमान की पुनर्व्याख्या की जाने की आवश्यकता है क्योंकि परंपरागत समाज में कार्य विभाजन का आधार आयु व लिंग के आधार पर था। परंतु वर्तमान में समानता, कानूनी प्रावधान, स्वतंत्रता, शैक्षणिक विकास जैसे मूल्यों के अनुसार आधुनिक समाज में कार्य विभाजन का नवीन स्वरूप अर्जित मूल्यों पर आधारित है।

भारत में महिला एवं पुरुष की कार्य सहभागिता मिनट प्रतिदिन

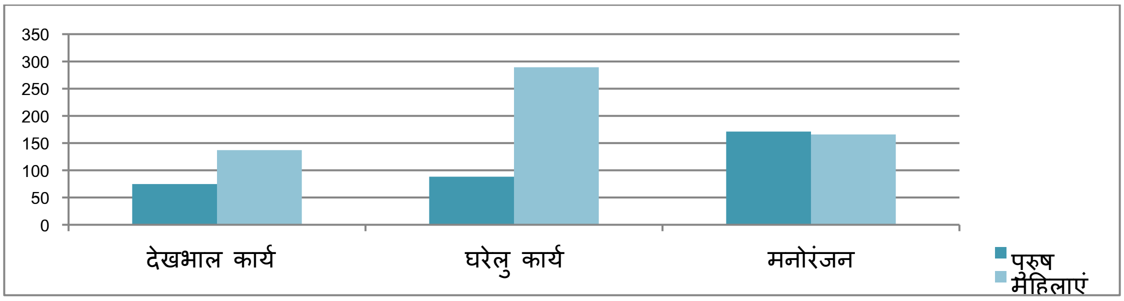

स्त्रोतः– भारतीय टाइम यूज सर्वे रिपोर्ट 2024

इस संदर्भ में भारतीय टाइम यूज सर्वे रिपोर्ट 2024 के अनुसार महिला एवं पुरुष की कार्य सहभागिता दर में अंतर श्रम विभाजन में व्याप्त लैंगिग असमानता को प्रकट करता है। इसमें 6 वर्ष से अधिक आयु के व्यक्ति द्वारा अवैतनिक घरेलू कार्य, देखभाल संबंधी कार्य, रोजगार आदि का वर्णन किया गया है। उपर्युक्त रिपोर्ट के अनुसार घरेलू कार्य में पुरुष सहभागिता महिलाओं की अपेक्षा कम है। अर्थात् एक विडंबना यह भी है कि आर्थिक नीति में सवेतन एवं निश्चित समय अवधि संबंधी गतिविधियों को ही कार्य की श्रेणी में माना गया है। इसलिए विश्व बैंक के जेंडर डाटा पोर्टल 2025 के अनुसार 187 देश की सूची में भारत 165वे स्थान पर है। महिला श्रमबल भागीदारी (एफ एल पी आर) जिसमें मुख्यतः बच्चों की देखभाल, पढ़ाई जारी रखना, स्वास्थ्य संबंधी कारण विशेष प्रशिक्षण कौशल का अभाव, सुविधाजनक स्थान पर काम की अनुपलब्धता आदि सम्मिलित किए गए हैं।

साहित्य समीक्षा

कपाड़िया के एम (1966) मैरिज एंड फैमिली इन इंडिया में लेखक द्वारा हिंदू परिवारों के परंपरागत पितृसत्तात्मक प्रतिमानों के विपरीत आधुनिकीकरण के प्रभाव स्वरूप बढ़ती शिक्षा तथा उच्च आर्थिक महत्वाकांक्षाओं के कारण मध्यम वर्गीय महिलाओं में घर से बाहर वेतनिक कार्यों मे बढ़ती भागीदारी का वर्णन किया है।

डोमिको डोरोथी (1975) ने प्रत्येक समाज की सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्य व परंपराओं की विभिन्नता के आधार पर होने वाली समाजीकरण की प्रक्रिया में महिलाओं को आरंभ से ही संवेदनशील, सहयोगी, कमजोर, आश्रित तथा आज्ञाकारी होने का शिक्षण एवं पुरुषों को स्वतंत्र, प्रगतिशील, आक्रामक होने का शिक्षण प्रदान किया जाता है। परंपरागत भारतीय समाज ने सदैव पुरुषों तथा महिलाओं के अलग मापदंड व कार्यक्षेत्र बनाए गए हैं।

श्रीनिवास (1977) ने ग्रामीण समाज में महिलाओ की बदलती भूमिका एवं उर्ध्वगामी गतिशीलता शहरी प्रवास, राजनैतिक भागीदारी, शिक्षा समाज सुधारकों की गतिविधियों से नवीन भूमिकाओं का सृजन का वर्णन किया है।

गोल्डिन क्लाउडिया (1983) ने महिलाओ की आर्थिक भूमिका में परिवर्तन, श्रम कार्यो में विभिन्नता से पारिवारिक जीवन एवम महिलाओ में आत्मनिर्भरता, स्वायत्तता, विवाह विघटन, परिवार का छोटा आकार, आदि सकरात्मक–नकारात्मक संरचनात्मक प्रभाव का वर्णन किया है।

परेरा मिर्टल एच ई (1987) ने अपने शोध पत्र में उल्लेख किया है कि परंपरागत लिंग आधारित सांस्कृतिक प्रतिमानों में सुधार कर सकारात्मक पारंपरिक मूल्य को स्थापित करते हुए आधुनिकीकरण के लाभों को प्राप्त किया जा सकता है। भारतीय सांस्कृतिक मूल्य विचारधाराओं के अनुरूप कामकाजी महिलाओं में तनाव, भूमिका संघर्ष एवं सामंजस्यहीनता को दूर करने की महिलाओं की प्रस्थिति में संस्थागत सुधार एवं महिला और पुरुष के अंतर्संबंधों में वैचारिक सुधार की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

त्यागी अनिल कुमार (1994) ने ऋग्वैदिक काल में खानाबदोश युग में अधिशेष उत्पादन के अभाव में महिलाओं का भी उत्पादन कार्य में सक्रिय योगदान था। व्यवसाय विभाजन एवं सामाजिक भेदभाव की शुरुआत कृषि प्रधान युग में हुई। उत्तर वैदिक काल में शिल्पकला जैसे महिला प्रधान (रंगाई, बुनाई, कढ़ाई) कार्य का विस्तार हुआ। लगभग 500 ई पू से महिलाओ की प्रस्थिति में गिरावट, पुरुषों पर निर्भरता, उत्पादन कार्य से घरेलू सेवा की ओर गमन हुआ। वैश्य एवं निम्न वर्ग की महिलाएं ही कृषि एवं सेवा संबंधित रोजगार जैसे–दासी, नर्तकी, गणिका, महिला अंगरक्षक, द्वारपाल आदि कार्य करती थी। मौर्यकाल तक सभी वर्ग में परस्पर सहयोग की भावना थी। उत्तरमौर्यकाल में विदेशी आक्रांता द्वारा महिलाओं को निम्न स्तरीय व्यवसायों में नियोजित किया जो उस समय निषिद्ध थे। वर्ग निर्माण काल से आज तक महिला एवं मजदूर वर्ग की स्थिति निम्न ही है।

आर एस मार्क्स एंड एम एस मकडर्मिक (1996) ने अपने शोध में भूमिका अधिभार, भूमिका संतुलन, तनाव, आत्मसम्मान, काम के घंटे, मित्र समूह के मध्य बनने वाले विभिन्न संबंधों पर केंद्रित अध्ययन में विभिन्न भूमिका के साथ अनुभव आधारित संतुलन पूर्ण संबंध से भूमिका तनाव अवसाद को कम करने का मार्ग बताया है।

एम नॉर्देनमार्क (2004) के अध्ययन के अनुसार यदि परिस्थितिया अंतर्विरोधी न हो तब अनेक सामाजिक भूमिकाओं को एकीकृत रूप से निभाने से व्यक्तिगत कल्याण बढ़ता है। अधिक भूमिका से कर्ता के जीवन को अर्थपूर्ण दिशा सामाजिक सुरक्षा तथा उचित मार्गदर्शन मिलता है परंतु जब कर्ता किसी एक भूमिका में अधिक व्यस्त हो जाता है तब नकारात्मक प्रभाव भी पड़ता है।

डॉ देवी सीमा कु मायावती (2019) पितृसता के परंपरागत प्रतिमान को ही महिलाओं के विरोधाभासी जीवन एवं निम्न सामाजिक प्रस्थिति का मूल कारण बताया है।

अरुणा इला (2023) ने महिला आरक्षण पर लिखे गए इस लेख में विभिन्न सामाजिक सांस्कृतिक को प्रथाओं के जाल में कैद प्रदेश की महिलाओं के संरक्षण को अहम माना गया है । चूंकि महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों घरेलू हिंसा, दुष्कर्म, बाल–अपराध, कुकड़ी प्रथा आदि के मामले में राजस्थान शीर्ष राज्यों में गिना जाता है। शोध लेख में लिंगभेद सम्बन्धी गतिविधी तथा क्रियाकलापों में परिवर्तन, परिवार में महिलाओ की सशक्त स्थिति, भारतीय परिवारों में नवीन समाजीकरण की नींव लेकिन सांस्कृतिक परिवर्तनो की अनदेखी के चर्चा की है।

डॉ उपासना, डॉ डगवाल किरण (2023) मानव जीवन के विविध पक्षों में स्त्री व पुरुष के मध्य व्याप्त असमानता ही शोषण की सबसे बड़ा कारण है।

उद्देश्य

भारतीय समाज के विविध धर्म एवम् सामाजिक वर्ग में महिलाओ की कार्य आधारित प्रस्थिति, दृष्टिकोण एवम् व्यवहार का अध्ययन करना।

कामकाजी महिलाओ की संगठित भूमिका के मध्य बनने वाले संबंधों एवम भूमिका अपेक्षाओं का अध्ययन करना।

अवधारणात्मक स्वरुप

- **कार्य**– वेतन के बदले में किया गया संस्थागत कार्य ही आर्थिक दृष्टिकोण से कार्य माना जाता है। शारीरिक एवं मानसिक श्रम द्वारा किये जाने वाले सवैतनिकध्अवैतनिक कार्य जिसका उद्देश्य मानवीय आवश्यकता को पूरा करने के लिए वस्तु व सेवाओं के उत्पादन करना है।
- **भूमिका**– "कोई भी भूमिका प्रस्थिति गत्यात्मक पक्ष है" (लिंटन 1968) एक पद संबंधी व्यवहार प्रतिमान और भूमिका अपेक्षाओं का योग जिसमें कर्तव्य तथा सुविधाओं का समावेश होता है भूमिका कहलाता है।
- **भूमिका अपेक्षा**– एक या अधिक व्यक्तियों के मध्य भूमिका से जुड़े विशिष्ट व्यवहार, कर्तव्य, मानदंडों का समुच्चय अथवा कर्ता द्वारा स्वयं या अन्य व्यक्तियों के व्यवहार के लिए व्यक्त–अव्यक्त भूमिका आधारित मांगों पर प्रतिक्रियात्मक कथन भूमिका अपेक्षा होता है। (बिडले)
- **भूमिका संघर्ष** – दो भिन्न प्रस्थिति संबंधित भूमिका न निभा पाने की स्थिति जिसमें एक प्रस्थिति संबंधी दायित्व का निर्वाह करते हुए दूसरे प्रस्थिति संबंधी दायित्व की पूर्ति ना होने पर मानसिक द्वंद का अनुभव होने लगे तो भूमिका संघर्ष कहा जाता है। गृहिणी तथा कामकाजी की दोहरी भूमिका का परिणाम भूमिका संघर्ष होता है। (सिंघी व गोस्वामी)

ऐतिहासिक संदर्भः महिला और कार्य नियोजन

वैदिक काल में महिलाओं को पुरुषों के समान शिक्षा, राजनीति, धर्म, संपत्ति, संबंधी अधिकार प्राप्त थे। उत्तर वैदिक काल में देश काल व धर्म के आधार पर महिलाओं को सत्ता प्रभुता एवं शक्ति से दूर रखने के लिए पुरुषों द्वारा संरचनात्मक तथा सांस्कृतिक बाध्यता आरोपित कर दी गई। जिसके प्रभावस्वरुप उनकी सामाजिक

स्थिति निम्न होती चली गई। मध्यकाल में भी महिलाओं को सामाजिक धार्मिक बाध्यता और मान्यताओं के जाल में प्रतिबंधित कर दिया गया (सिंघी,1998: भारद्वाज, 2017)। महिलाओं की सृजनशील शक्ति द्वारा निर्मित कलाकृतियां, संगीत, नृत्य, साहित्य व बौद्धिक योगदानों का अपेक्षाकृत इतिहास में स्वतंत्र उल्लेख कम ही हुआ है। परिवर्तन शाश्वत है। इसलिए कालांतर में जनसंख्या वृद्धि, औद्योगिकीकरण व नगरीकरण के प्रभावस्वरुप जनसंख्या घनत्व अभिवृद्धि से श्रम विभाजन के परंपरागत स्वरूप में परिवर्तन आया। महत्वाकांक्षा, गुणवत्तापूर्ण जीवन शैली, बढ़ती शिक्षा, अत्याधुनिक तकनीकी विकास के साथ महिलाओं की अभिरुचि पारिवारिक कार्यों के अतिरिक्त वहाँ भी बढ़ी, जहां पहले पुरुषों का एकाधिकार था, क्योंकि पुरुषों को कार्य के बदले वेतन मिलता है। लेकिन महिलाओं का गृहिणी के रूप में कार्य मूल्य मुक्त है। श्रम विभाजन के इस सामान्य स्वरूप के साथ महिलाएं घर तक सीमित रह गई। आधुनिक काल में भी अपवादों को छोड़कर घरेलू महिलाओं को स्वयं का नाम तक याद नहीं रहा। द्वितीय विश्व युद्ध तथा अन्य अंतरराष्ट्रीय घटनाक्रम के प्रभाव स्वरूप श्रमशक्ति के रूप में महिलाओं की आवश्यकता पड़ने पर उन्हें घर के बाहर कार्य करने के लिए अभिप्रेरित किया गया। अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं एवं समानता के लिए स्थापित संयुक्त राष्ट्र संगठन द्वारा भी 30 वर्ष बाद1975 में सार्वजनिक मंच से महिलाओं को सशक्त करने की बात कही गई। सशक्तिकरण का तात्पर्य निर्णय लेने में समान भागीदारी होना। तब से लेकर आज तक विभिन्न सरकारी, गैर सरकारी कार्यक्रमों के माध्यम से महिला उद्यमिता, कौशल विकास, संपत्ति संबंधी अधिकार, सेवा क्षेत्र में महिलाओं की भूमिका उत्तरोत्तर बढ़ रही है। फिर भी अभी अपेक्षाकृत पुरुषों के कम ही है, गृहिणी एवं कार्मिक की दोहरी भूमिका अपेक्षाओं ने महिलाओं को भूमिका संघर्ष की मनो–सामाजिक समस्या में उलझा दिया है। विवाहित महिला सशक्तिकरण के आनंद को अनुभव करने से पूर्व ही संतुलन को प्रयासरत दिखाई देती है प्रत्येक समाज की सांस्कृतिक एवं पारिवारिक संरचना महिलाओं की भूमिका को निर्धारित करती है।

समकालीन भारतीय महिलाएं एवम कार्य नियोजन का सामाजिक स्वरुप

भारत देश विविध धर्म एवम् सामाजिक समूहों के अंतर्गत महिला मानव श्रम के बड़े भाग का प्रतिनिधित्व करता है। महिला श्रम बल भागीदारी का वैश्विक औसत 47 प्रतिशत है, जबकि भारत में पीएलएफएस रिपोर्ट 2023–24 के अनुसार 41.7प्रतिशत है। वैश्विक प्रतिस्पर्धा के युग में तीव्र विकास की ओर उन्मुख भारतीय समाज में महिला जनसंख्या का समुचित लाभ उठाने के लिए घरेलू एवम् कार्यस्थल पर लैंगिक समानता विशिष्ट तकनीकी कौशल की आवश्यकता है। जिससे महिलाए समाज का आश्रित वर्ग न बनकर, सामाजिक परिवर्तन एवम समावेशी विकास का सशक्त माध्यम बन सकें। भारतीय समाज में विभिन्न धर्म वर्ग तथा जाति समूहों के अंतर्गत संरचनात्मक एवम् सांस्कृतिक भेद के कारण महिलाओ की घरेलू तथा कामकाजी प्रस्थिति भी भिन्न प्रकार की हैं।

धार्मिक समूहों में महिलाओं की श्रमबल भागीदारी दर

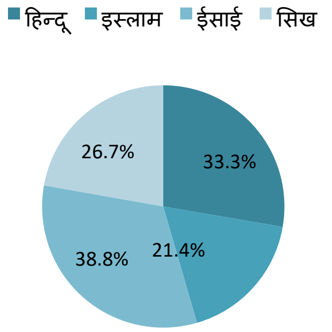

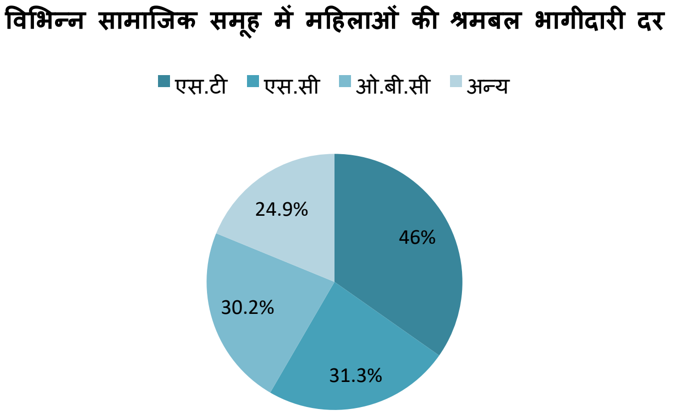

चित्रः भारत में 15 वर्ष और उससे अधिक आयु की कुल महिलाओं का धर्म एवम् समूह आधारित श्रमबल भागीदारी

Source: PLFS Report, MoSPI

उपर्युक्त आरेख में 58.3 प्रतिशत अवैतनिक कार्य करने वाली महिलाओ द्वारा किये जाने वाले घरेलू तथा देखभाल संबंधी कार्यो का भारतीय अर्थव्यवस्था में लेखांकन ना होने के कारण महिलाएं बेरोजगार है। समाज के भेदभाव पूर्ण रूढ़िवादी प्रतिमान, संरचनात्मक बाधाएं, कार्यस्थल पर पर्याप्त सुविधाओ का अभाव महिलाओ की कार्य भागीदारी को कम करती हैं।

भारतीय कामकाजी महिलाएं और सामाजिक भूमिका अपेक्षाएं

प्रत्येक मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन काल प्रस्थिति एवं भूमिका का समुच्चय है। सामान्यतः कर्ता द्वारा धारण की गई विभिन्न प्रस्थिति से सम्बंधित सामाजिक भूमिका अपेक्षाओं के अनुरूप भूमिका निर्वाह नहीं होने पर सामाजिक संगठन असंतुलित होने लगता है। (बिडले, सिंघी व गोस्वामी) भूमिका अपेक्षा तथा भूमिका ग्रहण के मध्य उचित सामंजस्य ही सामाजिक संगठन का मूल आधार है (सिंघी एवं गोस्वामी)। किसी भी प्रस्थिति से संबंधित भूमिका के लिखित–अलिखित प्रतिमान होते हैं परंतु उन्हें करने वाला व्यक्ति तथा उसकी अपेक्षाएं विभिन्न धर्म एवं जाति समूह में अलग–अलग होती हैं। सामान्यतः व्यक्ति की भूमिका अपेक्षा एवं आवश्यकता भी परस्पर समान एवं भिन्न हो सकती है। भारतीय समाज में भी महिलाओं की पारिवारिक अपेक्षाएं, मातृत्व अपेक्षाएं, वैवाहिक अपेक्षाएं, सांस्कृतिक–धार्मिक अपेक्षाएं तथा व्यक्तिगत अपेक्षाएं होती हैं। ये सभी भूमिका अपेक्षाएं समाज एवम संस्कृति द्वारा निर्धारित की गई है ना कि प्राकृतिक। पारिवारिक द्वंद का कारण महिलाओ में साझा अपेक्षाओं की कमी है (बिडले) । वैवाहिक जीवन में प्रवेश के दौरान पति–पत्नी दोनों की भूमिकाएं समाज एवं संस्कृति सापेक्ष होती है। इसके कुछ आदर्श प्रतिमान होते हैं। इन भूमिकाओं में संबंधित अपेक्षाओं को पूरा करने का दायित्व व्यक्तिगत होता है।जिसमें सर्वाधिक समायोजन महिलाओं को ही करना होता है। पितृ वंश व पितृस्थानीय सांस्कृतिक प्रतिमान में महिलाए नवीन परिवार, परिवेश तथा भूमिका में प्रवेश के साथ आरंभ से ही मानसिक द्वंद्व का शिकार होती हैं। जब समाज की महिलाएं अपने समूह एवं समाज द्वारा परिभाषित एक से अधिक भूमिका निर्वाह करते हुए निश्चित सीमा के अंतर्गत संबंधित अपेक्षाओं को पूरा करती है तो उन्हें सामूहिक स्वीकृति मिल जाती है परंतु जब यह भूमिका अपेक्षा पूरी नहीं होती है तो समूह की नकारात्मक दंड (अपमान तिरस्कार आदि) का भी शिकार होना पड़ता है। अतः समूह की वैधता प्राप्त करने के लिए अपनी अपेक्षाओं को पारस्परिक स्वीकृति हेतु साझा करना आवश्यक है। (गेटजैलगेट्जेल्स, जे. डब्ल्यू., – गुबा ई. जी. 1954) भूमिका संघर्ष की कमी या वृद्धि भूमिका अपेक्षा की असंगति तथा व्यक्तित्व पर निर्भर करती है।

निष्कर्ष

महिला सशक्तिकरण के बहुआयामी औपचारिक अनौपचारिक प्रयास, संवैधानिक प्रावधान, संपत्ति एवम् विवाह संबंधी नवीन कानूनी प्रावधान ने महिलाओं की द्वितीय प्रस्थिति को परिवर्तित कर समाज की मुख्यधारा में सम्मिलित करने की अपेक्षा की है। घर से बाहर तक लैंगिक समानता, सशक्तिकरण, स्वतंत्रता एवं सुरक्षा संबंधी मुद्दों को सतत विकास लक्ष्य में भी सम्मिलित किया गया है। इस अनौपचारिक घरेलू कार्य का कोई आर्थिक मूल्य न होने के कारण महिला द्वारा किए गए विभिन्न कार्य एवं बहुआयामी भूमिकाएं उन्हें सुपर मॉम का दर्जा प्रदान करती है जो सामान्य मनुष्य से विपरीत विशिष्ट शक्ति प्राप्त मानव का आभास कराता है। बहुआयामी भूमिकाओं के जाल में जब एक ही समय में दो असंगत भूमिका से संबंधित अपेक्षाएं पूरी ना होने पर भूमिका संघर्ष का जन्म होता है। इस मनो–सामाजिक समस्या का समाधान व्यक्ति सापेक्ष है। अर्थात प्रत्येक समाज में भूमिका संघर्ष की स्थिति में समायोजन हेतु कोई सर्वमान्य नियमावली हो जिससे दोहरा कार्य करने वाली भारतीय कामकाजी महिलाएं भूमिका संघर्ष की स्थिति में उचित समायोजन कर सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गेट्जेल्स, जे. डब्ल्यू. – गुबा ई. जी. (1954). रोल, रोल कनफ्लिक्ट, एंड इफेक्टिवनेसः एन इम्पीरिकल स्टडी. अमेरिकन सोशियोलॉजिकल रिव्यु, 19(2), पेज न 164–175. यूआरएलः– https://www.doi.org/10.2307/2088398 एक्सेस ऑनः – 22 मार्च 2025.
2. कपाड़िया के एम (1966) मैरिज एंड फैमिली इन इंडिया ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस
3. चेंजिंग पोजीशन ऑफ इंडियन वीमेन एम एन श्रीनिवास वॉल 12 (2), 1977 पेज न 221–238 रॉयल ऐंथ्रोपोलॉजिकल इंस्टिट्यूट ऑफ ग्रेट ब्रिटेन यूआरएलः– http://www.jstor.org/stable/2800793 एक्सेस ऑनः – 08 –09–24 13:12 न्ज्ब
4. चेंजिंग इकनोमिक रोल ऑफ वूमेनःए क्वांटिटेटिव एप्रोच (1983) क्लाउडिआ गोल्डिन जर्नल ऑफ इंटरडिसप्लैनरी हिस्ट्री वॉल.13(1) पेज. न 707–733 ,एम आई टी प्रेस 1983 यूआरएलः– http://www.jstor.org/stable/203887 एक्सेस ऑनः – 09–09–24 17:10 न्ज्ब
5. बिड़ले बी जे (1986), रीसेंट डेवलपमेन्ट इन रोल थ्योरी. एनुअल रिव्यु ऑफ सोशियोलॉजी 12 पेज न 67–92 यूआरएलः– https://www.jstor.org/stable/2083195 एक्सेस ऑनः – 23 मार्च 2025.
6. त्यागी, अनिल के (1994)वुमेन वर्कर इन एंशियन्ट इंडिया,राधा पब्लिकेशन1994, नई दिल्ली।
7. मार्क्स, एस.आर. – मैकडर्मिड, एस.एम. (1996). मल्टीपल रोल्स एंड द सेल्फः ए थ्योरी ऑफ रोल बैलेंस. जर्नल ऑफ मैरिज एंड फैमिली, 58(2) पेज न 417 –432. यूआरएलः– https://www.doi.org/10.2307/353506 एक्सेस ऑनः – 26 फरवरी 2025.
8. नॉर्डेनमार्क, एम. (2004). मल्टीपल सोशल रोल्स एंड वेल बीइंगः ए लोंगीट्यूडनल टेस्ट ऑफ रोल स्ट्रेस थ्योरी एंड द रोल एक्सपेंशन थ्योरी. एक्टा सोशिऑलोजिका, 47(2), पेज न 115–126. यूआरएलः– https://www.jstor.org/stable/4195018 एक्सेस ऑनः – 26 फरवरी 2025.
9. स्नाइडर डेनियल (2012), जेंडर डेविएन्स एंड हाउसहोल्ड वर्कः द रोल ऑफ ऑक्यूपेशन. अमेरिकन जर्नल ऑफ सोशियोलॉजी 117(4) पेज न 1029 –1072 यूआरएलः– https://www.jstor.org/stable/10.1086/662649 एक्सेस ऑनः – 26 फरवरी 2025.
10. डॉ सीमा, कु मायावती (2019) भारतीय समाज में महिलाएंयशोध मंथन, अप्रैल– जून 2019, पेज न 586–590.
11. अरुणा, इला 2023 4 अक्टूबर, दैनिक भास्कर पेजः 6

❑❑❑